UMESCHANDRA COLLEGE

Unmesh

ANNUAL MAGAZINE

श्रद्धावान् लभते ज्ञानम्

2025-26

e-Magazine

Published by:
Dr. Md. Tofazzal Haque
Principal
Umeschandra College
13, Surya Sen Street, Kolkata 12 and
129 FC Block, sector III, Salt lake,
Kolkata 106 (extended campus)

Editors:
Prof. Srotoswini Dey
Prof. Ishan Karmakar
Prof. Kamal Kumar
Prof. Jyoti Paswan
Prof. Sonali Chakraborty
Prof. Bapi Kushari
Prof. Khadimul Shikari

Copyright © Umeschandra College, 2025-26

Magazine designed and typeset by:
Prof. Ishan Karmakar

CONTENTS

Reflections from the Principal's desk	**i**
Convener's note	**ii**
Poetry	**1 - 18**
Prose	**19 - 53**
Painting	**54**
Photography	**55 - 63**

Reflection From the Principal's Desk

I am happy to note that our college is coming out with its Annual College Magazine for the academic year 2025-2026. The college magazine is a forum which would aptly be used for recording, fond memories and creative writing of the students beyond academic interest. I am sure this will depict the aspirations and vision of the faculty and the students.

I extend my heartfelt thanks and warm wishes to the Convenor and members of the Magazine committee, all Staff and Students of Umeschandra College, to continue the journey on the road of excellence. The first e-version of our Annual College Magazine Unmesh is finally published. Wish you a safe and healthy life.

Dr. Md. Tofazzal Haque
Principal
Umeschandra College

Convenor 's Note

I feel immense pleasure and satisfaction in presenting the latest issue of our college magazine 'Unmesh' after a couple of years. The college magazine is the mirror of students ' creativity beyond academic interest. I have tried my best to present you a sparkling and completely new issue of magazine, this time it being an online magazine. Over time the world changes and so the content and mode of our magazine. We must focus on the rapidly changing scenario around us and I am looking forward to the new generation for their new ideas and concepts. I extend my heartfelt thanks to all the readers of 'Unmesh'.

Professor Srotoswini Dey
Convenor
Magazine Committee

Pulasthya Sarkar
(Student)

A Lament for Two Souls Undone

Beneath pale stars that wept with silver fire,
We met where fate first whispered soft despair;
Thy hand in mine did kindle doomed desire,
A heaven born, yet cradled in a snare.

O love! Thou wert my sin and sacred vow,
My sweetest truth, my most unkindest lie;
For even as our lips did promise now,
The hourglass bled, and time prepared goodbye.

The world, stern judge, pronounced our hearts a crime,
Its laws engraved in iron, not in grace;
It tore thy name from mine, as bell from chime,
And set cold night upon thy living face.

Pulasthya Sarkar

I watched thee fade like dawn denied the sun,
Thy breath a prayer the heavens would not hear;
Thy eyes still swore our story not yet done,
Yet death stood close, indulgent, cruelly near.

Live on," thou said'st, "and love me when I'm dust."
O monstrous charge, too heavy for the soul!
What life remains when hope decays to rust,
When half a heart must stumble, cracked, and whole?

I pressed my lips where once thy pulse did sing,
And tasted ash where roses used to bloom;
The night drew close its dark and velvet wing,
And crowned our bed the altar of the tomb.

Now lies my body by thy silent side,
Two shadows stitched where light dared not intrude;
In death alone were we not thus denied—
One breath, one grave, one endless solitude.

Let lovers yet unborn our fate deplore:
That love, too pure for earth, must die—or more.

Rajat Sharma
(Student)

The Midnight Cold

Drunk in rage in the cold midnight,
There you see a broken knight.
He wears his armour as if his pride,
Overlooking the fallen kingdom—O the plight.
The air is dark and heavy; so is the dawn.
The night wolves howl in unison—they mourn.
His eyes burn as if ember glows,
His breath so fiery, like a chimney blows.
The wrath he holds within, so intense,
Smiling at the horror—only blood he can sense.
His scars turned dark as they clot;
Thirst for rage is all he has sought.
The hatred so extreme, it boils his blood;
The battle so ruinous, it killed his humanity.
Screams of suffering—a sweet, calming melody;
Painful cries, a newfound comedy.

Rajat

Painful cries, a newfound comedy.
He picks his sword at the sight of movement,
Disappointed to see it's a feasting rodent.
The bodies of warriors and peasants—
Not much different in the winter aftermath.
The fire of anguish burns with utmost sears;
In a blink of an eye, it evaporated his tears.
At the crack of dawn lay a wounded pawn;
With shattered philosophy of life, he was gone.
The fight for kingdom at last came to a halt;
Nothing was left to rule—
Neither the land nor the people.
Laid in peace, the commander of the corps;
Laid at ease, an army of corpses.

Subhankar
Bhattacharya
(Semester I)

Being A Flower Girl

When a bud comes first to the tree
That's how I first saw her on the street.
When the first flower starts to bloom from a bud
That's how my heart slowly falls for her.
When that half bloomed flower takes on the form of freshness
That's how my love for her slowly grows deeper.
When that flower reaches the end of its' life
That's how I faces the truth of my love.
When all the petals fall from that flower
That's how she walks away from my life.

Subhankar
Bhattacharya

যদি আমি হতাম

যদি আমি রামধনু হতাম,
রঙ ভরিয়ে দিতাম সবাইকেই,
যদি আমি রাত্রি হতাম,
রাজা হতাম সবার স্বপ্নতেই,
যদি আমি খুশি হতাম
আনন্দে রাখতাম সবাইকে
যদি আমি ভোর হতাম
নিজের আলোতে সবাইকে ভাসিয়ে দিতাম
আমি যদি দিন হতাম
জীবন ভরিয়ে দিতাম সবার এই আলোতে
যদি আমি চোখের জল হতাম
ঝরে পড়তাম নিজের দুঃখেতেই
এগুলি নিয়েই জীবন, দুঃখ হোক বা কষ্টেই
সবাই আমার আপন

অর্ণব দেব নারায়ণ রায়
(অধ্যাপক বাণিজ্য বিভাগ)

আবার হবে তোমার সাথে দেখা

আবার হবে তোমার সাথে দেখা
চাঁদের ছায়া পড়বে তোমার মুখে,
এখন না হয় চললে ফেলে একা
তখন তোমার জল আসবে চোখে।

অগোচরে প্রাণের কথাগুলো
বলবো করেও বলোনি কতদিন!
এড়িয়ে গিয়েও খুব কি লাভ হলো?
প্রদীপ ঘসে' জানবেই আলাদিন।

পুরনো স্মৃতি যেতেই পারো ভুলে
শিশির ভেজা ছিল আমাদের মন,
আবার তুমি সাজাবে বনফুলে
চৈত্রদিনের রিক্ত উপবন!

অর্ণব দেব নারায়ণ রায়
(অধ্যাপক বাণিজ্য বিভাগ)

একটি মেঘও আসেনি ভুল করে'
শুকনো মাটিতে ঝরেনি বৃষ্টি ঝেপে,
এবারে যখন আসবে আমার ঘরে
ধরবো তোমার হাত দুটোকে চেপে।

ঠিক তখনই আমার বৃক্ষলতা
দুলে উঠবে আনমনা এক হাওয়ায়,
আমার চোখের সকল অস্থিরতা
ফুটবে জেনো তোমার আঁখিতারায়।

আমরা দুজন আবার পাগল হবো
সময় বুঝে জানাবো কৃতজ্ঞতা,
এবার যখন তোমার দেখা পাবো
বুঝবে তুচ্ছ ছিল না ব্যাকুলতা।

অর্ণব দেব নারায়ণ রায়
(অধ্যাপক বাণিজ্য বিভাগ)

আমরা দুজন আবার পাগল হবো
মরবো বলে’ তৈরী থাকার মতো,
মরবো কি না কীভাবে তা বলবো?
আমার কাছে চেয়োনা কৈফিয়ৎ।

আবার হবে তোমার সাথে দেখা
চাঁদের ছায়া পড়বে তোমার মুখে,
এখন না হয় চললে ফেলে একা
তখন তোমার জল আসবে চোখে।

অর্ণব দেব নারায়ণ রায়
(অধ্যাপক, বাণিজ্য বিভাগ)

পড়শি

আমরা দুজন সত্যিকারের পড়শি
দূরত্বটা হোক না আলোকবর্ষী—

আকাশপাড়ে বসে আছি কত জন্ম কাছাকাছি
তোমার গানে যে সুর বাজে সে সুর চেনা আমারও যে

তোমার অলি ছুটে আসে আমার কলি ফুটলে
আমার দুচোখ জলে ভাসে তোমার বক্ষ টুটলে

আমরা দুজন সত্যিকারের পড়শি
দূরত্বটা হোক না আলোকবর্ষী—

দহনতাপের ক্লান্তি তোমার আমার ছায়ায় কিছুটা কাটে
স্রোত বয়ে যায় শীতল হাওয়ার তোমার নিবিড় দৃষ্টিপাতে

অর্ণব দেব নারায়ণ রায়
(অধ্যাপক, বাণিজ্য বিভাগ)

মুষলধারায় বৃষ্টি এসে নদীর বুকে তুফান তোলে
সেই নদীতে আমরা ভেসে ভয়ডরহীন যাই গো চলে'

আমরা দুজন সত্যিকারের পড়শি
দূরত্বটা হোক না আলোকবর্ষী—

আমার উদাস শীতের হাওয়া লাগে তোমার দ্রুপল্লবে
তোমার তুহিন চোখের চাওয়া আমার বীণার আর্তরবে

আমার রক্তপলাশবনে রঙের নেশা করে শুরু
উড়িয়ে আবির সংগোপনে তোমার শিমুল অশোকতরু

আমরা দুজন সত্যিকারের পড়শি
দূরত্বটা হোক না আলোকবর্ষী।

Akshat Kyal
(Semester I)

कितनी जल्द

कितनी जल्द अपने आशियाने में ईश्वर के रूप का बसेरा चाहोगे, जो कि मिलता है बड़े नसीबवालों को
कितनी जल्द उस बालक के हृदय में जिम्मेदारियों का बोज धरना चाहोगे
कितनी जल्द बताना चाहोगे कि ये दुनिया नहीं है वैसी जैसी दिखती है कहानियों में
कितनी जल्द उसके हसने-खेलने वाले दिन छीनना चाहोगे उससे
कितनी जल्द दुनिया कि क्रूरता दिखाना चाहोगे उस नन्हे बालक को
कितनी जल्द उस छोटी सी जान के हृदय में अपना भय बसाना चाहोगे
कितनी जल्द अपना क्रोध बिन बात उस बालक को सुनाना चाहोगे
कितनी जल्द अपनी असफलता का भार उसपे उड़ेलना चाहोगे
कितनी जल्द उसपर कामयाब बनने का बोझ चढ़ाना चाहोगे
कितनी जल्द सिखाना चाहोगे रंग, रूप, धर्म तथा जाती के प्रति भेद भाव करना

कितनी जल्द उसके दिमाग को विकाश करने के चक्कर में उसी से टकरा जाओगे
कितनी जल्द उसे अपनी तरह बनाना चाहोगे
कितनी जल्द चाहोगे कि वो समाज के डर से एक पत्ता भी न करे यहां से वहां
कितनी जल्द अपने परिवार के झगड़ों में उसे भी शामिल करना चाहोगे
कितनी जल्द परिवार के घावों को बताने के परे उसी को चोट पहुंचा आओगे
कितनी जल्द अपना एहसान उस छोटी सी जान पर जताना चाहोगे
कितनी जल्द उससे एहसास दिलाना चाहोगे कि अब वो कल का आया हुआ बन चुका है बोझ तुम पर
कितनी जल्द उसकी, उसी के उम्र के बच्चों से तुलना शुरू करना चाहोगे
कितनी जल्द उसकी हर एक बात को गलत बताने में लग जाओगे
कितनी जल्द उसकी विकलांगता पर इशारे शुरू करना चाहोगे
माना कि पालन पोषण और प्यार जताने में कोई कमी न दिखाई, जो मांगा वो एक पल में लाकर थमाया परंतु
कितनी जल्द उस ईश्वर के रूप को ईश्वर की सबसे बड़ी गलती ठहराना चाहोगे
कितनी जल्द..

आशुतोष गुप्ता
(Semester III)

रूहानी

वो साफ़ थी जैसे गंगा का पानी थी,
वो महक इत्तर की नहीं, रूहानी थी।

दौड़ता था रगों में उसके, मैं लहू जैसा,
मैं किताब था और वो मेरी कहानी थी।

मैं कीचड़ था, जिसमें कमल सी खिली थी वो,
मैं दरिया था और वो मेरी रवानी थी।

उसका नूर था, जैसे फरिश्तों का साया,
और मेरी आँखें, तो बस इंसानी थीं।

आशुतोष गुप्ता

उसे दो पल की फुर्सत नहीं मिली कभी,
मुझे पूरी ज़िंदगी साथ बितानी थी।

मेरी क़लम अब बूढ़ी हो चली है,
यार, वो मेरी गज़लों की जवानी थी।

मैं क्या कहूँ उसके बारे में, "आशू",
वो मेरी तन्हाई में गूँजती एक पुरानी निशानी थी।

Archit Singh
(Semester III)

दिल का मौसम

सूखे पत्तों सा बिखरगया है मन, तेरे जाने सेआ गया हैपतझड़ का मौसम।
जो कभी गुलशनथा, अब बंजरहै वो ज़मीन, हवाओं में अबवो पुरानी नमीनहीं।

याद है वोबसंत, जब तूपास था? हरफूल में रंग, हर लम्हे मेंएहसास था।
मगर अब सर्दरातों की चादरहै तनी, आंसुओंकी बूंदें भीबन गयीं हैंबर्फ घनी।

लोग कहते हैंमौसम तो बदलतेरहते हैं, परइस दिल कीठंडक को वोकहाँ समझते हैं।
बाहर तो सूरजनिकल आया हैफिर से, परमेरे अंदर अभीतक कोहरा हैघना।

शायद इंतज़ार ही अबमेरी ऋतु है, जिसमें न धूपहै, न कोईखुशबू है।
बस एक खामोशीहै जो शोरमचाती है, टूटेदिल की यहीसर्द कहानी सुनातीहै।

Amnit Ramani
(Student)

जीवन का सत्य – मृत्यु

जीवन एक माया है, लोगों के ख़्वाबों के शहर में समय है |
जिसने इस तथ्य को न जाना ,उसने हर पल इसे गवाया है |

जिस क्षण किसी ने कुछ पाया, उसी क्षण किसी ने कुछ खोया है
जिस क्षण किसी ने जन्म लिया ,उसी क्षण किसी ने मृत्यु को भी प्राप्त किया है

केवल मृत्यु एक सत्य है,
इसके अलावा जो कुछ पाया जो कुछ खोया,
सब कुछ एक परछाई है |
किसी पहर मेरे जीवन के दरवाजे पर,
मृत्यु को आना है ....
एवं मेरे ये ख़्वाबों का शहर टूट जाना है !

Kiran Singh
(Semester VI)

Illusion of Freedom

In my house, freedom was a loan with a very specific interest rate. My father would tell the relatives I was "free to fly," but he never mentioned the length of the string tied to my ankle.

When I was ten, I treated my textbooks like a secret currency. While other girls my age were going on outings with their friends, I was at home, my hands deep in soapy water or helping my mother in the kitchen. I didn't complain; I was saving up 'good behavior' to buy my independence later. Studying abroad, living in quite apartment all alone, working in a corporate office, opening a own business someday. I truly believed that once I reached college, the walls wouldfall and I would finally get my freedom and achieve my dream step by step. But I am in my second year now, and I've realized that my academic success

wasn't a key to a door; it was just a reason for my parents to watch me more closely.

“You have only two years left,” my father said at dinner tonight, his voice calm as if he were discussing a business contract. “As soon as your studies are complete, we will start searching for marriage proposals. Everything must be settled the moment you graduate.”

I looked at my mother, but her advice was a whisper I had heard a thousand times: “Stay like a good daughter. Don’t talk to anyone in college. Keep your head down.” She wasn’t just giving me advice; she was giving me the rules of my cage.

I think,to them, my education was just a way to pass the time until I was handed over. I wanted to scream. I

wanted to tell them about the Master's applications hidden in my browser tabs—my secret plan to study abroad where I didn't have an expiry date.

But I knew I could never click 'Submit.' I knew that if I chased my dreams and left, they would never understand. They would never allow it. In their eyes, and in the eyes of everyone we knew, a daughter who leaves is a daughter who has 'failed.' I saw the classmate from school who became an air hostess, posting photos from different time zones, looking exhausted but belonging to herself. She was 'hated' by our society, a name used to scare other daughters into silence.

I thought of my cousin Shweta Di, the 'rebel' who had chosen her own life. I remember the way my parents looked at her photo like she was a ghost. She had her freedom, but she was dead to the people who raised her. I realized then that my freedom wasn't just mine

to take—it was a debt I owed to my parents' reputation. If I left to find myself, the neighbors would question my character, and society would judge them for my disobedience. I could not build my life on the ruins of their dignity. I was a coward who loved her parents too much to let the world point fingers at their faces.

I went back to my room and sat in the dark. The application for the London university was complete. All I had to do was click ‘Submit.’ But the silence of the house felt like a heavy blanket.

With a slow, shaking hand, I moved the cursor to the top corner of the screen.

Click.

The tab disappeared. The scholarships, the dreams of a quiet apartment, the life I had built in my head, itall vanished. I shut the laptop. The room went pitch black.

I didn't reach for my books. I didn't try to fight anymore. I simply lay down and closed my eyes, welcoming the destiny that had been written for me before I was even born. I fell into a heavy, dreamless sleep, finally realizing that my freedom was never a sky to fly in—it was just a room with a very beautiful view of a locked door.

The illusion of freedom was over. I had chosen to be loved instead of being free.

Piyush Saraf
(Semester I)

From Household Budget to National Budget

How Daily Choices Shape India's Future

Introduction: Economics Begins at Home

The economic strength of a nation is not built solely through policies or annual budget announcements. It originates at the household level, where individuals make daily decisions regarding income, expenditure, savings, health, and consumption. These choices collectively influence national development.

Household Budgeting and National Economic Health

Household financial behaviour plays a crucial role in shaping the broader economy. Sound budgeting practices encourage savings, reduce excessive credit dependence, strengthen formal financial participation, and build economic resilience.

Conceptual Framework

The relationship between individual financial behaviour and national economic outcomes is illustrated below.

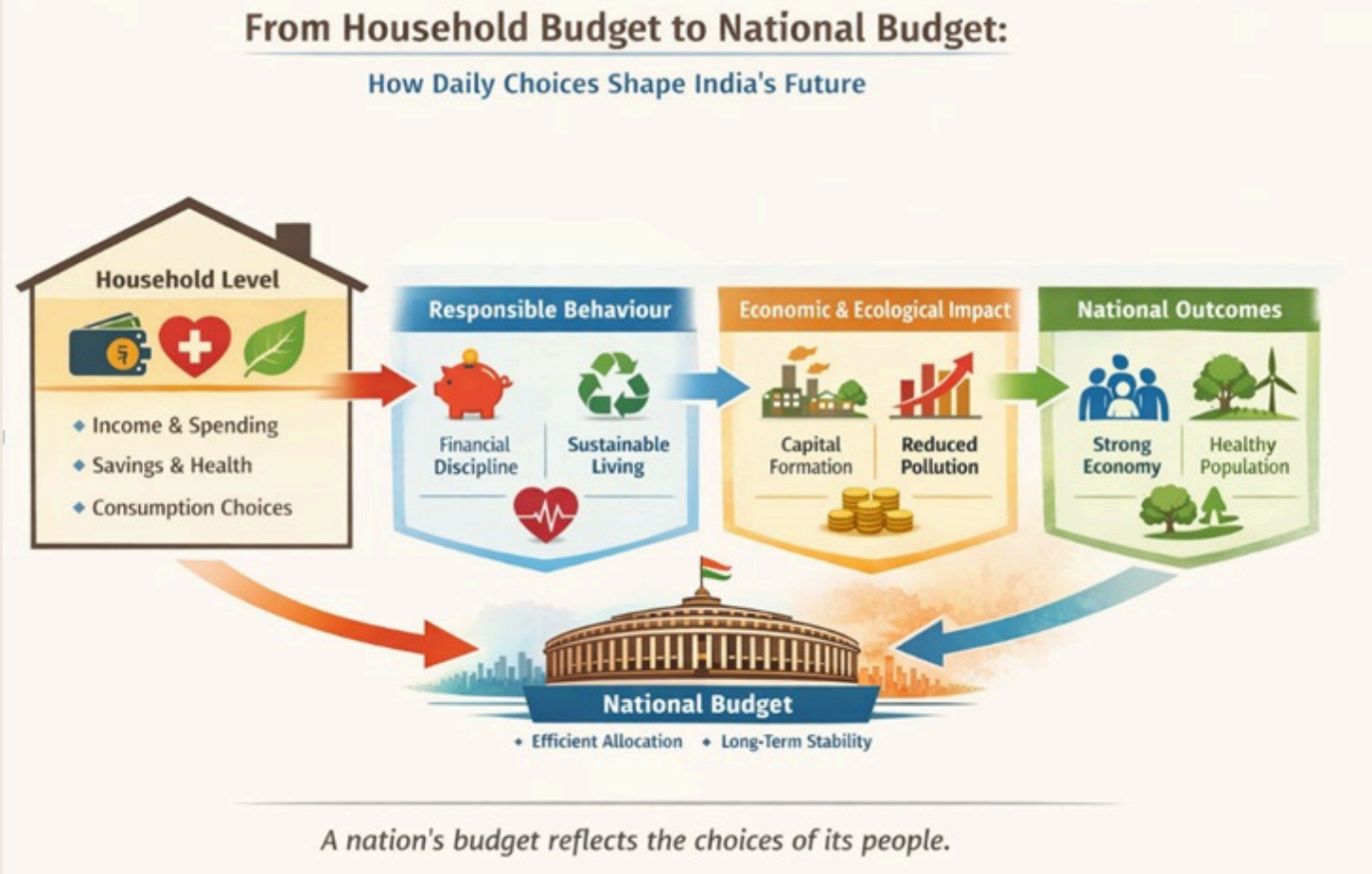

Consumption Patterns and Ecological Impact

Unplanned consumption imposes pressure on natural resources and public infrastructure, leading to environmental degradation and long-term economic costs.

Health as Human Capital

Health is a vital economic asset. A healthy population enhances productivity, reduces healthcare expenditure, and strengthens national growth.

Responsible Citizenship and Nation-Building

Nation-building is reflected in daily actions such as financial discipline, sustainable habits, and ethical consumption.

Conclusion: Collective Choices, National Future

A nation prospers when its citizens align financial prudence with ecological responsibility and health consciousness. The foundation of national progress lies within every household.

Shivam Sengupta
(Student)

The Requiem of the Red Cinder: A Final Ode to Kolkata

Kolkata is not a city of glass and steel; it is a city of memory and moss. To walk through its northern veins today is to witness a slow, poetic heartbreak—a "dying beauty" that feels less like a sudden collapse and more like a long, exhaled breath. It is the scent of old damp books on College Street clashing with the sterile smell of air-conditioned malls.

Shivam Sengupta

The Ghost of the Renaissance

There was a time when Kolkata's air was heavy with the ink of Tagore and the smoke of revolutionary cigarettes. In the sun-dappled courtyards of North Calcutta, art wasn't a commodity; it was a conversation. The Bengal Renaissance wasn't just a chapter in a history book; it was a living, breathing defiance.

* The Architecture of Soul: The old Rajbaris (palaces) with their green slatted windows and intricate cornices were built to breathe. They were designed for the monsoon rain to dance in the Thakur-dalan (courtyard).
* The Literature of the Soil: Every Para (neighborhood) had a poet; every tea stall was a parliament. The beauty lay in the slowness—the deliberate pace of a tram carving its way through the mist of time.

Shivam Sengupta

The Last Sigh

The tragedy of Kolkata's dying beauty is that it is becoming a museum of itself. We celebrate the heritage on World Heritage Day, but we watch the plaster crumble every other day of the year. The city is losing its "shabby-chic" soul to a "shiny-empty" future.

Kolkata's beauty was always found in its imperfections—the peeling paint that looked like a map of the world, the tangled overhead wires that seemed to hold the sky together, and the stubborn refusal to be anything other than itself. As the glass towers rise, the city's heart, once made of gold and grit, feels increasingly like a hollow echo.

Photo courtesy: Wikipedia

Rudra Chatterjee
(Semester III)

A Trip to Sikkim: India's Switzerland

Introduction to Sikkim

During our academic break, I had the chance to visit Sikkim, a Himalayan state in northeastern India known for its clean environment, cultural harmony, and disciplined way of life. With its snowcapped mountains, lush valleys, and serene landscapes, Sikkim deserves the title "India's Switzerland."

Journey Through the Himalayan Terrain

The journey into Sikkim was as captivating as the destination. Winding roads, deep gorges, and flowing rivers accompanied us throughout the drive, offering stunning views of the Eastern Himalayas.

Gangtok: The Capital City

Gangtok, the capital of Sikkim, left a lasting impression with its cleanliness, eco-friendliness, and orderly lifestyle. MG Marg, a vehicle-free zone, showed the city's modern outlook while keeping its cultural essence.

North Sikkim: Untouched Himalayan Wilderness

North Sikkim stood out as the most enchanting part of the trip. Less commercialized and rich in natural

beauty, this region featured dramatic landscapes, snow-covered peaks, and a sense of untouched wilderness.

Lachen and Lachung Villages

The villages of Lachen and Lachung offered a glimpse into traditional Himalayan life. Surrounded by towering mountains and flowing rivers, these villages showed simplicity, warmth, and scenic charm.

Gurudongmar Lake&Tsomgo (Changu) Lake

At over 17,000 feet, Gurudongmar Lake is one of the highest lakes in the world. The clear water amid snow-covered mountains created a surreal and uplifting atmosphere. Tsomgo (Changu) Lake, surrounded by snow and steep mountains, appeared like a natural mirror.

Yumthang Valley and Zero Point

The Yumthang Valley, known as the Valley of Flowers, amazed us with its vast meadows, colourful blooms, and flowing rivers. Further ahead lay Zero Point, the last motorable road near the Indo-China border. There, the landscape was entirely snow-covered, offering a raw and unforgettable Himalayan experience.

The Historic Silk Route of Sikkim

Exploring the Silk Route was a journey into history. This ancient trade path once connected India with Tibet and China, facilitating the exchange of silk, spices, wool, and salt. The route highlights Sikkim's historical significance in trans-Himalayan trade.

Zuluk, Thambi View Point, and Zigzag Roads

The Silk Route region includes Zuluk, famous for its dramatic zigzag roads, and Thambi View Point, which offers a spectacular sunrise view of the Kanchenjunga range. The engineering feat of these mountain roads is impressive.

Baba Harbhajan Singh Mandir &Nathula Pass

Visiting Baba Harbhajan Singh Mandir, commonly called Baba Mandir, was deeply moving. Dedicated to an Indian Army soldier, the temple symbolizes faith, sacrifice, and the strong bond between soldiers and civilians. Nearby, Nathula Pass, located on the Indo-China border, filled us with patriotism and admiration for Indian soldiers stationed under tough conditions.

Monasteries, Culture, and Spirituality

The monasteries of Sikkim, especially Rumtek Monastery, reflected profound spiritual traditions. Prayer wheels, monks chanting, and colourful flags represented peace, mindfulness, and cultural continuity.

Conclusion and Reflection

The trip to Sikkim was not just a sightseeing tour but a meaningful journey through nature, history, and culture. From the untouched beauty of North Sikkim and Zero Point to the historic Silk Route and spiritual landmarks, Sikkim truly earns the title “India’s Switzerland.” This experience left us with lasting memories and a deeper respect for nature and heritage.

Photo courtesy: Internet

Piyush Kumar Sah
(Semester III)

Book Review: *Principles* by Ray Dalio

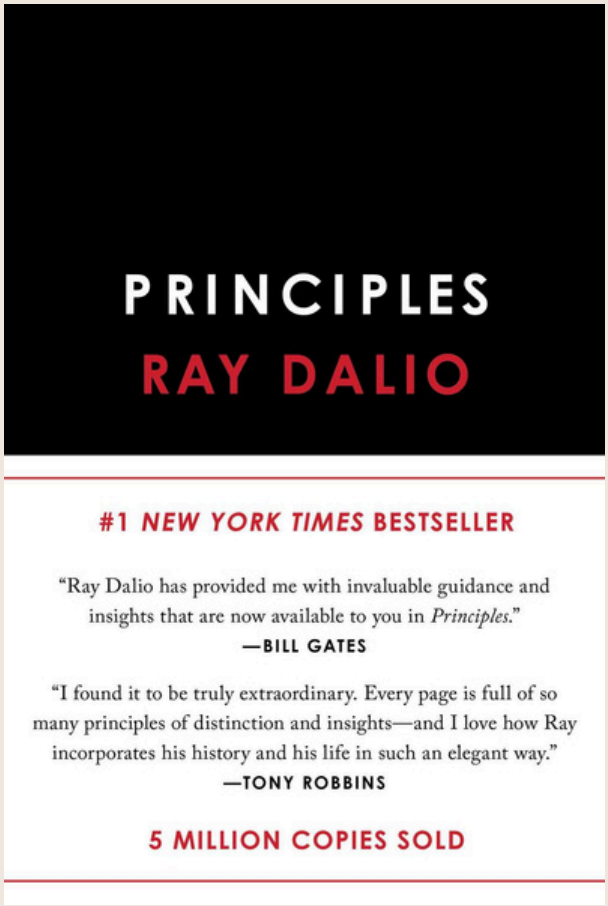

The name says it all. This book is not just about life principles in a broad, philosophical way. It gets into things that actually matter, like the Principle of Decision-Making, the Principle of Building Relationships, and how to pick the right Partner or Mentor, not just in business but in the bigger decisions that shape your life.

Honestly, I have not come across another book that teaches you how to build a successful business with this level of clarity. Ray Dalio's formulas are something else. No economist's theory comes close, because these are not just ideas, they come from real experience, real failures, and real results.

If you want to build or scale a business, figure out how to find the right mentors, or just understand what your business decisions can actually lead to, pick this book. I genuinely do not think there is anything better out there for that.

My Life-Changing Quote
“Network = Net Worth”

डॉ. कमल कुमार
(सहायक प्रोफेसर, हिंदी विभाग)

वन्देमातरम्: राष्ट्रीय स्वाधीनता आंदोलन का शाश्वत नाद

डेढ़ सौ साल पहले देश में एक ऐसी आवाज़ उठी थी जिसकी गूंज आज भी बनी हुई है. यह आवाज़ 'वंदे मातरम्' की थी, जो आगे चल कर हमारी आज़ादी की लड़ाई का एक मंत्र बन गयी। बांग्ला-लेखक बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय ने सन् 1875 में यह गीत रचा था जो छह साल बाद उनके उपन्यास 'आनंद मठ' का हिस्सा बना। संस्कृत और बांग्ला में रची इस रचना में प्रारम्भ में दो ही छंद थे, बाद में जब इसे उपन्यास का हिस्सा बनाया गया तो शेष अन्य छंद भी इसमें जोड़े गये जो उपन्यास के कथानक के अनुरूप। बंकिम बाबू ने इसे अंग्रेज़ों के उस फरमान के विरोध में रचा था, जो 'गॉड सेव दि किंग' गाये जाने के लिए जारी किया गया था। आगे चलकर यही गीत हमारी आज़ादी का जयघोष बना। आज़ादी के बाद 'आनंद मठ' में जुड़े इस गान से पहले दो छंदों को हमने 'राष्ट्रगीत' के रूप में स्वीकार किया।आज विश्वकवि रवींद्रनाथ टैगोर द्वारा रचे गये 'जन-गण-मन...' के साथ बंकिमचंद्र के इस गीत को बराबरी का दर्जा दिया गया है।

ईस्ट इंडिया कंपनी के कुशासन तथा प्रज्ञा-शोषण के दुष्परिणाम से सन 1974-74 के बीच बंगाल प्रांत भीषण अकाल का शिकार हुआ था। इस दुरवस्था से जनता का असंतोष फूटा। विभिन्न जन-समूहों ने, जिसमें संन्यासी भी शामिल थे, 'आनंदमठ' में बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय ने अकाल-पीड़ित विद्रोही संन्यासियों को वंदे मातरम् गीत गाते हुए चित्रित किया है। वंदे मातरम् में मातृभूमि को देवी मानते तथा उसे सर्वशक्तिसम्पन्न बताते हुए उसकी सेवा में अपना सर्वस्व अर्पित करने की विद्रोह की आवाज उठायी। किसी प्रबल भावावेश में रचित वंदे मातरम् 'बंगदर्शन' में प्रकाशित होकर एक उपासनापरक गीत के रूप में चर्चित हुआ। पर जब यह गीत कवि के उपन्यास 'आनंदमठ' में विप्लवी संन्यासियों द्वारा गाते हुए दिखाया गया, तब यह गीत स्वाधीनता के लिए आतुर भारतीयों की आत्मिक पुकार बन गया और देखते ही देखते यह स्वाधीनता-संग्रामियों तथा क्रांतिकारियों का जयघोष बन गया।

वस्तुतः बंकिमचन्द्र चटर्जी सरकारी महकमे में कार्यरत थे और भारतीय इतिहास से सम्बन्धित साहित्य का सृजन करते थे। आप अनेकानेक उत्कृष्ट कोटि की सांस्कृतिक रचनाएं की, किन्तु प्रसिद्धि मिली इनकी कालजयी कृति 'आनन्दमठ' से। आनन्दमठ, 1773 में उत्तरी बंगाल में, जो संन्यासी विद्रोह हुआ था, से अभिप्रेरित है। इस उपन्यास में

बंकिमचन्द्र ने संन्यासियों के माध्यम से वो सब कहलवा दिया जिसको कि कहना एक सरकारी आदमी के लिए सहज नहीं था। इस उपन्यास में उन्होंने समाज संस्कृति और सत्ता के मध्य अद्भुत समन्वय बनाने की कोशिश की है। परिणामस्वरूप "आनन्दमठ" देश भक्ति का पर्याय बन गया और उसने बंगाल को वन्देमातरम् गीत दिया और यह गीत राष्ट्रीयता का मन्त्र बन गया, इस रूप में यह बंकिमचन्द्र की जीवन्त रचना है। यद्यपि संगठित रूप से वन्देमातरम् की स्वीकार्यता पर प्रश्नचिह्न रहा है, किन्तु भारतीय राष्ट्रीय चेतना ने सदैव ही इसको मन प्राण का गीत माना है। इस गीत ने न केवल बंगाल को अपितु संपूर्ण भारत को ही झकझोर दिया। राष्ट्रवादियों विशेषकर सांस्कृतिक राष्ट्रवादियों के लिए तो यह अग्रिम श्रेणी का गीत बना। यहाँ पर यह ज्ञातव्य है कि अंग्रेजों के प्रति संन्यासी विद्रोह एक ही दिन में नहीं पनप गया था, यह पनपा था शनैः शनैः अंग्रेजों की बढ़ती जा रही कुत्सित नीतियों के विरोध में और अंग्रेजों की प्रगतिशील भूमिका के प्रतिशोध के रूप में। अंग्रेजों की इस भूमिका ने संपूर्ण समाज को उद्वेलित करके रख दिया था इसलिए जैसे ही आनन्दमठ प्रकाशित हुआ वैसे ही जनता को अपना अभीष्ट मिल गया। डॉ. रामविलास शर्मा इस सम्बन्ध में बहुत ही क्रान्तिकारी विचार प्रस्तुत करते है, वे कहते है कि "संन्यासी विद्रोह नवजागरण का स्रोत जनता की सशस्त्र कार्यवाही के बल पर बना, लेखकों, पुस्तकों व्याख्यानों के बल पर नहीं।" अवश्य ही उन लेखों,

पुस्तकों और व्याख्यानों के लिए प्रेरणास्वरूप बंगाल में दो तरह के नवजागरण हुए-

1. अंग्रेजी राज बना रहे, उसमें रहते हुए हम शान्तिपूर्वक समाज सुधार करते रहें।

2. अंग्रेजी राज में लाखों आदमी दम तोड़ रहे है, इस राज को हर सम्भव उपाय से खत्म करो।

पहले वाले नवजागरण की चर्चा बहुत कम होती है। इस चर्चा में अकाल में मरने वालों का जिक्र कम ही आता है। साम्राज्य विरोधी आन्दोलन से उसका प्रत्यक्ष कोई सम्बन्ध हो यह भी दिखायी नहीं देता। इसके विपरीत दूसरा नवजागरण स्वाधीनता आन्दोलन से सीधा जुड़ा हुआ है। उन दोनों को भुला देना हैं। डॉ. शर्मा ने संपूर्णता में विश्लेषण किया है, दोनों कारणों का पहला कारण तो चर्चा में इसलिए रहता है क्योंकि इससे अंग्रेजों का महिमामण्डन होता है और समाज की प्रगतिशील भूमिका उजागर होती है, किन्तु - दूसरे कारण का जिक्र इसलिए नहीं किया जाता, क्योंकि इससे - अंग्रेजों का वीभत्स चेहरा उजागर होता है और भारतीय सांस्कृतिक राष्ट्रवाद को पुनस्थापना पर बल दिया जाता है। भारत की जनता का भारत भू-भाग से माता-पुत्र का सम्बन्ध स्थापित होता है। यही बात आधुनिक बुद्धिजीवियों को स्वीकार नहीं है। इसलिए ही समस्त सांस्कृतिक राष्ट्रवादियों को नेपथ्य में धकेल दिया

गया है और तथाकथित प्रगतिशीलों को परिदृश्य पर स्थापित किया जाता रहा है। इसलिए आनन्दमठ ने जहाँ एक ओर कांग्रेस के आन्दोलन को प्रेरणा दी वही, दूसरी ओर नवयुवकों को सशस्त्र क्रांति के माध्यम से स्वतन्त्रता प्राप्ति के लिए प्रेरित किया। इस प्रकार से बंकिम के विचारों को ने चहुँ ओर वैचारिक सैलाब दिया।

सव्यसाची भट्टाचार्य ने 'वन्देमातरम्: एक गीत की जीवनी' की भूमिका में लिखा है- "कहते हैं कि कुछ रचनाएँ पुस्तक के पन्नों में ही सिमटी रह जाती हैं लेकिन कुछ रचनाएँ पुस्तक के पन्नों से बाहर आती हैं और हमारे जीवन में पैठ जाती हैं। 'वंदे मातरम्' गीत लंबे समय से ऐसी ही अनूठी रचना रही है। एक तरफ इस गीत को लोकमानस में राष्ट्रीय गीत के रूप में प्रसिद्धि मिली तो दूसरी तरफ इसके बिम्ब-विधान, व्यंजना और बुतपरस्ती के आधार पर उठे आक्षेपों ने विवाद का घमासान ही तैयार कर दिया। यह गीत सन् 1870 के दशक के शुरुआती सालों में किसी वक्त मूलतः वंदना-गीत अथवा स्तुति के रूप में रचा गया और अगले कुछ वर्षों तक अप्रकाशित रहा। सन् 1881 में इसे 'आनंदमठ' नामक उपन्यास में शामिल किया गया। उपन्यास के कथा-संदर्भ के भीतर इस गीत के विस्तृत रूपाकार ने हिंदू-युद्धघोष का स्वर धारण कर लिया। और इस तरह, बंकिमचंद्र चटर्जी ने 'मातृभूमि' नाम की एक नयी प्रतिमा ही गढ़ दी।" सन् 1905 के बंगाल के स्वदेशी आंदोलन ने 'वंदे मातरम्' को

राजनीतिक नारे में तब्दील कर दिया। राष्ट्रवादी विरोध-प्रदर्शन की अगुआई करते हुए रवीन्द्रनाथ टैगोर ने इसे गाया और अरविंद घोष ने बंकिम को राष्ट्रवाद का 'ऋषि' कहकर पुकारा। सन् 1920 तक, सुब्रह्मण्यम् भारती तथा दूसरों के हाथों विभिन्न भारतीय भाषाओं में अनूदित होकर यह गीत 'राष्ट्रगान' की हैसियत पा चुका था। बहरहाल, सन् 1930 के दशक में 'वंदे मातरम्' की इस हैसियत पर विवाद उठा और लोग इस गीत की मूर्तिपूजकता को लेकर आपत्ति उठाने लगे। एम. ए. जिन्ना इस गीत के सबसे उग्र आलोचकों में एक थे। जवाहरलाल नेहरू के नेतृत्व में गठित एक समिति की सलाह पर भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने सन 1937 में इस गीत के उन अंशों को छाँट दिया जिनमें बुतपरस्ती के भाव ज्यादा प्रबल थे और गीत के संपादित अंश को राष्ट्रगान के रूप में अपना लिया। संविधान-सभा ने राजेंद्र प्रसाद के कहने पर गीत के इसी रूप को 'जन-गण-मन' के साथ राष्ट्रीय गीत के रूप में अपनाया और राष्ट्रगान का दर्जा दिया। सन् 1930 और 1940 के समूचे दशक में मुस्लिम लीग इस गीत के विरोध पर अड़ी रही और ठीक इसी अनुपात में हिंदू सांप्रदायिक ताकतों ने गीत की तरफदारी की। सन् 1947 से, कुछ भारतीयों की नजर में 'वंदे मातरम्' सांप्रदायिक युद्धनाद बन चुका था तो कुछ दूसरों का मानना था कि यह राष्ट्रीय संस्कृति का जायज प्रतीक है। इस तरह गीत की हैसियत पर टकराव की शुरुआत हो गई।

इस प्रकार, 'वंदे मातरम्' गीत के सियासी इस्तेमाल ने इसके अर्थ को बार-बार बदला। गीत एक सांस्कृतिक कला-तथ्य है। इसके ऊपर आरोपित विभिन्न अर्थों की तह से कई मुद्दे उभरते हैं, मसलन-राष्ट्रीय अथवा सांप्रदायिक पहचान को गढ़ने के क्रम में साहित्य के एक अंश का इस्तेमाल औजार की तरह करना; अलग-अलग समय में अलग-अलग अर्थों का आरोपण और फिर एक ही कला-तथ्य का अलग-अलग पीढ़ियों के लिए अर्थ का भिन्न-भिन्न होना। उदाहरण के लिए, 'वंदे मातरम्' का जो अर्थ अरविंद की पीढ़ी ने ग्रहण किया, वही अर्थ जवाहर लाल नेहरू, एम. ए. जिन्ना अथवा वी. डी. सावरकर की पीढ़ी ने नहीं किया। किसी रचनाकार की रचनाधर्मी स्वायत्तता के राजनीतिक इस्तेमाल की संभावना बराबर बनी रहती है और इसमें राजनेताओं की खास भूमिका होती है-यह शायद सबसे ज्यादा गौरतलब मुद्दा है।

इतिहासकार सव्यसाची भट्टाचार्य ने ‘वन्देमातरम्: एक गीत की जीवनी’ (2003) नामक पुस्तक के माध्यम से इस गीत का इतिहास और उसकी जीवनी लिखी है। अगर लोग उसे ध्यान से पढ़ें तो टुकड़ों में प्रस्तुत इतिहास और उसके विवाद से मुक्ति मिल सकती है. लेकिन मुक्ति किसे चाहिए? विवाद से मुक्ति न तो संघ परिवार को चाहिए और न ही आल इंडिया मजलिस-ए-एत्तेहादुल मुसलमीन के असदुद्दीन ओवैसी को चाहिए और न ही जमीयत उलेमाए-हिंद के अरशद मदनी को चाहिए। ओवैसी और मदनी ने शुरू के उन दोनों छंदों को भी इस्लाम के लिए

शिर्क (मूर्ति पूजा) बताते हुए मुसलमानों को इसे गाने से मना कर दिया। जबकि संघ परिवार और भाजपा उस पूरे गीत को गाने के लिए सभी नागरिकों को बाध्य करने पर आमादा है। वह इसके लिए भाजपा शासित राज्यों में सरकारी आदेश जारी कर चुकी है। इसलिए अगर स्कूलों और दफ्तरों में मुस्लिम बच्चें या कर्मचारी नहीं गायेंगे तो वे कोप के भाजन बनेंगे या वे अलगाव के शिकार होंगे।

भारतीय इतिहास में ऐसे क्षण कम ही आते हैं, जब कोई एक शब्द, एक ध्वनि या एक स्वर समूचे राष्ट्र के प्राणों में ओज, उत्साह और आत्मविश्वास का संचार कर दे। 'वंदे मातरम्' केवल दो शब्दों का उच्चारण भर नहीं है, यह भारत की मिट्टी की सौंधी सुगंध, उसके पर्वतों की ऊंचाई, नदियों की पवित्रता, खेतों की हरियाली और आत्मगौरव की चिरंतन अनुभूति का साक्षात मंत्र है। यह यह शक्ति है, जिसने भारत की जन-चेतना को जागृत किया, गुलामी को दीवारों को चुनौती दी और राष्ट्र के भीतर सुप्त आत्मगौरव की ज्वाला प्रज्वलित की। यह ध्वनि भारतीय स्वतंत्रता संग्राम का नारा भी रही और आत्मबल की अभिव्यक्ति भी। 'वंदे मातरम्' वह प्रेरणा है. जिसने पराधीनता के अंधेरे में डूबे भारतवासियों को संघर्ष की मशाल दी, त्याग की अनुभूति दी और स्वतंत्रता के पथ पर चलने के लिए अदम्य साहस का संचार किया।

डॉ. कमल कुमार

किसी गीत को शक्ति कितनी विराट हो सकती है, यह समझने के लिए वंदे मातरम् से बड़ा कोई उदाहरण नहीं। यह गीत भारत के हृदय में आज भी धड़कता है क्योंकि यह केवल शब्दों का संग्रह नहीं बल्कि आत्मा की पुकार है। 7 नवंबर 1875 को 'बंगदर्शन' में पहली बार प्रकाशित वंदे मातरम् मात्र साहित्यिक रचना नहीं थी, यह मानसिक प्रतिकार था। यह उन पीड़ित आत्माओं का स्वर था, जिनकी स्वतंत्रता का अस्तित्व छीन लिया गया था। यह गीत उस भारतीय जीवन-दर्शन का प्रतीक था, जिसके मूल में प्रकृति, संस्कृतिऔर राष्ट्र का अद्वैत निहित है। बंकिमचंद्र ने 1857 के महान संग्राम की असफलता के बाद जिस मानसिक अवसाद, भ्रम और हताशा से भारतीय समाज गुजर रहा था, उसे समझा। अंग्रेजों की नीति स्पष्ट थी, भारतवासियों को मानसिक दासता में इस प्रकार जकड़ देना कि वे अपनी सांस्कृतिक स्मृतियों को भूल जाएं। 'गॉड सेव द क्वीन' के माध्यम से वे इस राष्ट्र की आत्मा को पराजित करना चाहते थे परंतु बंकिमचंद्र की कलम ने जो अग्नि प्रज्वलितकी, वह किसी भी सत्ता की शक्ति से प्रबल सिद्ध हुई।वंदे मातरम् केवल मातृभूमि की वंदना नहीं बल्कि भारतीय आध्यात्मिकता की मूल भावना है। बंकिमचंद्र ने जब इस गीत को अपने उपन्यास 'आनंदमठ' में स्थान दिया, तब यह गीत पुस्तकों की सीमाओं से निकलकर जन-जन का जीवन-मंत्र बन गया। 1905 का बंगाल विभाजन भारतीय इतिहास का निर्णायक मोड़ था। वंदे मातरम् उसी

काल में जन-चेतना की धड़कन बनकर उभरा। विद्यालयों से लेकर गांवों तक, कलकत्ता की गलियों से लेकर मुंबई बंदरगाहों तक किसान से लेकर विद्यार्थियों तक हर वर्ग की वाणी में यह स्वर उसने स्कूलों, सभाओं और सार्वजनिक में इस गीत पर प्रतिबंध लगाया किंतु प्रतिबंध किसी विचार की उष्मा को नहीं सकता। जितना प्रतिबंध बढ़ा, वंदे मातरम् स्वर उतना ही उग्र, उतना ही प्रखर और ही अजेय होता गया।

इतिहास गवाह है कि जब-जब भारत का पर संकट आया, यह गीत रणभेरी की तरह गूंजा। जब-जब स्वतंत्रता के स्वप्न को कुचलने का प्रयास हुआ, वंदे मातरम् के स्वर ने भारतीयों में अदम्य आत्मबल जगाया। बाल गंगाधर तिलक ने इसे राष्ट्रचेतना की धड़कन कहा, अरविंद घोष ने इस गीत को आध्यात्मिक राष्ट्रवाद का आधार बताया, बिपिनचंद्र पाल ने इसे जनांदोलन का प्राण और नेताजी सुभाषचंद्र बंस ने आजाद हिंद फौज का अभिवादन मंत्र बनाया। भगत सिंह, राजगुरु और सुखदेव जब फाँसी के तख्ते पर बढ़ रहे थे, तब उनकी आंखों में भय नहीं, वंदे मातरम् की लौ थी। चन्द्रशेखर आजाद के लिए यह गीत संकट में साहस का शस्त्र था। अंग्रेज शासक कानून बना सकते थे, क्रूर दमन कर सकते थे परंतु इस गीत की आत्मशक्ति को पराजित नहीं कर सके। वंदे मातरम् का प्रभाव केवल भारत तक सीमित नहीं रहा। 1907 में जर्मनी के स्टटगार्ट में मैडम भीकाजी कामा ने जब भारत का पहला

तिरंगा फहराया, तब उस ध्वज पर अंकित शब्द थे 'वंदे मातरम्'। यह केवल झंडा नहीं, भारत को अंतरराष्ट्रीय पहचान का घोष था। उस क्षण ने पूरी दुनिया को बताया कि भारत सोया हुआ राष्ट्र नहीं अपितु जागृत चेतना है, जो अपनी मुक्ति तक संघर्ष करती रहेगी।

यह भूमि राम और रहमान, काबा और काशी, गीता और गुरुग्रंथ साहिब, बुद्ध और नानक, महावीर और सूफियों का संगम है। बंदे मातरम् इसी विविधता की एकता का काव्य है और जो इसे संकीर्णता की दृष्टि से देखते है, वे भारतीयता की आत्मा को नहीं समझते। संविधान सभा ने 24 जनवरी 1950 को वंदे मातरम् को राष्ट्रीय गीत का दर्जा देकर इसे राष्ट्रधर्म की प्रतिष्ठा दी। भारतीय संविधान प्रत्येक नागरिक को यह कर्तव्य सौपता है कि वह राष्ट्रध्वज, राष्ट्रगान और राष्ट्रीय प्रतीकों का सम्मान करे। अतः वंदे मातरम् का अपमान केवल संवैधानिक अवमानना नहीं बल्कि सांस्कृतिक और ऐतिहासिक चेतना से विमुखता है। यह केवल एक गीत नहीं, भारतीय सभ्यता के सात्विक आत्मबोध का नाद है। यह कहता है कि हमारी धरती माता है, हमारी नदियां पवित्रता को धारा है, हमारे खेत सोना उगलते और हमारा राष्ट्र हमारी आत्मा है। इसे कहना धार्मिक कर्म नहीं, सांस्कृतिक कृतज्ञता है। इसमें किसी देवी की पूजा नहीं बल्कि उस भूमि का अभिनंदन है, जिसने हमें अस्तित्व दिया।भारत आज जिस वैश्विक भूमिका को और

बढ़ रहा है, उसमें राष्ट्रीय चेतना, सांस्कृतिक आत्मविश्वास और ऐतिहासिक गौरव अनिवार्य तत्व हैं। वंदे मातरम् हमें स्मरण कराता है कि राष्ट्रधर्म कोई विकल्प नहीं, अस्तित्व है। जब तक यह गीत हमारे भीतर गूंजता रहेगा, तब तक भारत की आत्मा जीवित रहेगी। आज आवश्यकता इस बात की है कि मजहबों, जातीय या वैचारिक सीमाओं से उठकर इस मंत्र को समझा जाए। वंदे मातरम् कहना किसी संप्रदाय का अनुष्ठान नहीं, मातृभूमि को प्रणाम करना है। जो इस भूमि का सम्मान नहीं कर सकता, वह किसी भी विचारधारा का सच्चा अनुयायी नहीं हो सकता क्योंकि राष्ट्र के बिना न धर्म बचता है, न इतिहास। वंदे मातरम् वह शाश्वत नाद है, जिसने भारत को पराधीनता की गर्त से निकाला, जिसने वीरों को फांसी के फंदों पर मुस्कुराने का साहस दिया, जिसने दास-संस्कृति को जंजीरों को तोड़ा और स्वतंत्रता की चेतना जगाई। यह गीत भारतीय मानस का शाश्वत स्वर है, जो हमें स्मरण कराता है कि हम केवल नागरिक नहीं बल्कि उस भूमि की संतान हैं, जिसने हमारे लिए अन्न, जल, संस्कृति, आत्मबोध और गौरव का संसार रचा।

Khadimul Shikari
(Guest lecturer in Urdu)

انسان کو خود اپنا احتساب کرنا چاہیے

غافل شہکاری
لیکچرار، ایچسن چندر نگر، کورنگی

درخت جب اندر سے کھوکھلا ہو کر سوکھ جاتا ہے تو اس کے گرنے میں زیادہ وقت نہیں لگتا، درخت کے کانٹے اور ٹہنیاں اس کی مدد نہیں کر سکتیں بلکہ اس کی حالت مزید خراب کر دیتی ہیں۔ یہی حال قوموں اور گروہوں اور جماعتوں کا ہوتا ہے، جب قوم خود اپنے اعمال و کردار پر نظرِ ثانی نہیں کرتی، جو جماعت خود اپنے اصولوں کی پرواہ نہیں کرتی، جس قوم کے قول و فعل میں تضاد ہوتا ہے، وہ اپنی حفاظت کے لئے دنیا میں ایک پتھر سے زیادہ نہیں ہوتی۔ قوم اپنی بقا کے لئے اپنی اصلاحی طاقت اور اپنے محسنوں سے مقابلہ کرتی ہے۔ قرآن مجید نے بھی اسی بات کی کہ ان کے قول و فعل میں یکسانیت نہیں ہے۔

اس وقت اگر ہم مسلمانوں کی بات کریں تو وہ اس وقت ایسی صورتحال سے دوچار ہیں جو دکھ کی وجہ بن رہی ہے۔ لیکن حقیقت میں کوئی ایسی بات نہیں ہے جس کی تلافی نہ کی جا سکے۔ آپ کے عقیدے، آپ کے کردار، آپ کی زبان، آپ کے اپنے معاشرے کے ساتھ تعلقات یہ سب آپ کے کردار کا حصہ ہیں۔ اگر آپ کے کردار میں تضاد ہے تو آپ کے خلاف نفرت ہو گی اور اس بات کے علاوہ اور کوئی بات بھی نہیں ہو گی۔ ہمیں اپنے کردار کی درستگی کرنی چاہیے، ہمیں اپنی غلطیوں کا اعتراف کرنا چاہیے، ہمیں اپنی کمزوریوں کو دور کرنا چاہیے، ہمیں اپنے معاشرے میں بہتری کے لئے کام کرنا چاہیے۔

اسلام نے نکاح کو آسان بنایا ہے، مسلمانوں نے اسے مشکل بنا دیا ہے۔ آج نکاح ایک مشکل ترین مرحلہ بن چکا ہے۔ اس میں بے جا رسومات، فضول اخراجات اور غیر ضروری تقاضے شامل کر دیے گئے ہیں۔ رسول اللہ ﷺ نے نکاح کو آسان کرنے کی تلقین

فرمائی ہے۔ نکاح صرف ایک ایجاب و قبول کا نام ہے، لیکن ہم نے اسے ایک بوجھ بنا دیا ہے۔ نکاح کے ساتھ جہیز، دعوت، ولیمہ اور دیگر رسومات کو اس طرح جوڑ دیا گیا ہے کہ ایک عام آدمی کے لئے نکاح کرنا مشکل ہو گیا ہے۔

ہمیں چاہیے کہ ہم نکاح کو آسان بنائیں، غیر ضروری رسومات کو ختم کریں اور اپنی زندگی کو سادہ بنائیں۔ ہمیں اپنے معاشرے میں اصلاح کے لئے کردار ادا کرنا چاہیے۔ ہمیں اپنی ذمہ داریوں کا احساس ہونا چاہیے اور ہمیں اپنی غلطیوں کا اعتراف کرنا چاہیے۔ اگر ہم ایسا کریں گے تو ہمارا معاشرہ بہتر ہو جائے گا اور ہم ایک مضبوط قوم بن سکیں گے۔

Ishita Gope
(Semester I)

Bhumika Kesharwani
(Semester I)

Sourodeep Sen
(Semester V)

Sourodeep Sen

Meraj Jamil
(Student)

Rudra Chatterjee
(Semester III)

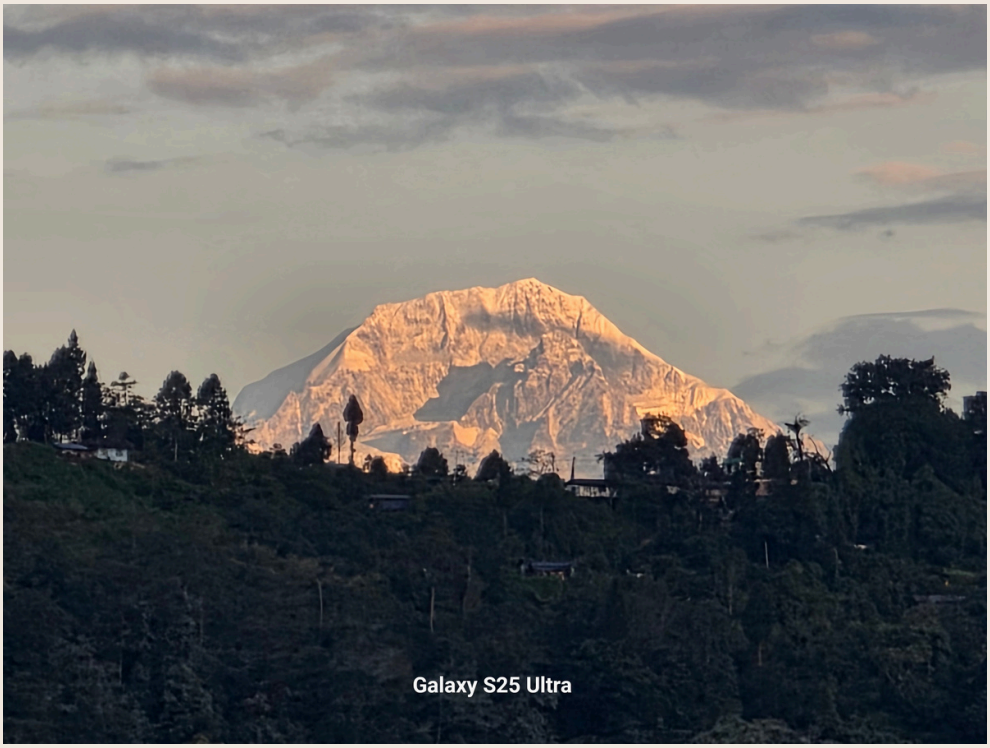

Rudra Chatterjee

Rudra Chatterjee

Rudra Chatterjee

Mohammad Aamir Jamil
(Student)

Backcover : FARHAT AKRAM (Student)